एस. आर. तिवारी

बनाम

भारत का संघ और ए.एन.आर.

(2013 की सिविल अपील No.4715-4716)

28 मई, 2013

[डॉ. बी. एस. चौहान और दीपक मिश्रा, जे. जे.]

सेवा कानूनः

सजा की मात्रा - न्यायिक समीक्षा - अनुज्ञेय निर्धारित किया। यदि प्राधिकरण द्वारा लगाया गया दंड असंगत है। दूराचार की गंभीरता से तब वह मनमाना तथा संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लघन होगा। यदि प्राधिकरण द्वारा लगाया गया दंड न्यायालय के विवेक को झकझोर देता है, तब वह स्वयं के दंड को प्रतिस्थापित कर सकता है। वर्तमान मामले के तथ्यों में अपराधी अधिकारी पर अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सजा अदालत की अंतरात्मा झकझोर देती है। क्योंकि अपराधी अधिकारी का कदाचार के अपराध के अनुरूप नहीं है। जो गंभीर प्रकृत्ति का नहीं था। इसलिये लगाई गई सजा को एक साल के लिये दो वेतन वृद्घि के बिना किसी संचयी प्रभाव के दंड से प्रतिस्थापित की जाती है।

न्यायिक समीक्षा - न्यायालय न्यायिक समीक्षा का शक्तियों का प्रयोग कर सकता है तथा आक्षेपित आदेश दुर्भावनापूर्ण, बेईमान या भ्रष्ट प्रथाओं से ग्रस्त है तो न्यायालय के पास प्रशासनिक निर्णय को सही करने की विशेषज्ञता नहीं है। न्यायालय को लोकहित को आगे बढ़ाने के लिये एेसी शक्तियों का प्रयोग करे आैर न केवल

एक कानूनी बिंदु बनाने के लिये न्यायिक समीक्षा का दायरा निर्णय लेने की प्रक्रिया तक सीमित है न की निर्णय के खिलाफ। अपीलार्थी एक आई.पी.एस. अधिकारी जब प्रतिनियुक्ति पर सीमा सुरक्षा बल के साथ तैनात किया जाता है, तब अनुशासनात्मक कार्यवाही उसके खिलाफ शुरू की गई थी। आठ आरोप उसके खिलाफ लगाये गये थे। जांच अधिकारी ने अपनी रिपोर्ट में यह कहा कि आरोप संख्या 03 पूरी तरह से साबित हो गया है। आरोप संख्या 04 और 06 आंशिक रूप से साबित हुये हैं। जबकि बाकी आरोप साबित नहीं हुये है। अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने सिर्फ इस बर्खास्तगी की सजा का आदेश पारित किया। प्रशासनिक न्यायाधिकरण ने उसकी बहाली का आदेश किया। हालांकि, उच्च न्यायालय ने प्रशासनिक न्यायाधिकरण के आदेश जिसमें सिर्फ आरोप संख्या 04 व 06 को साबित माना हो हटाया तथा भारत संघ को आदेशित किया नये आदेश पारित करने के उन आरोप के संबंध में अपीलार्थी की पुनरीक्षण याचिका उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गई थी।

वर्तमान अपील के लंबित रहने के दौरान, भारत संघ, इस न्यायालय में अपनी अपील हारने के बाद, उच्च न्यायालय के आदेश के खिलाफ अपीलार्थी को बहाल किया और संचयी प्रभाव के बिना एक वर्ष के लिए दो वेतन वृद्धि को रोकने का जुर्माना लगाया गया। लेकिन यूपीएससी की सलाह पर अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सजा दी। इस न्यायालय ने अपीलार्थी को प्रतिनिधित्व करने के लिए कहा और भारत संघ से उसी पर निर्णय लेने तथा इस न्यायालय के समक्ष रखने के लिये कहा। भारत संघ ने प्रतिनिधित्व पर विचार करने के पश्चात अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सजा लगाई तथा आदेश लागू किया, बिना इस न्यायालय के समक्ष रखे। याचिकाकर्ता ने अवमानना याचिका दायर की।

अतः विचार के लिए प्रश्न यह था कि क्या अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सजा अपराध साबित होने की अनुपालना में थी; और क्या भारत संघ ने जानबूझकर इस न्यायालय के आदेश की अवज्ञा की है, कि सजा के आदेश को तुरंत प्रभावी नहीं करे और इस न्यायालय के समक्ष रखने के निर्देश दिये थे।

न्यायालय द्वारा अपील और अवमानना याचिका का निर्णय अभिनिर्धारित किया गया।

1.1. न्यायालय न्यायिक समीक्षा की शक्तियों का उपयोग कर सकता है तथा यदि शक्तियों के अभ्यास में कोई स्पष्ट त्रुटि हो या शक्तियों का अभ्यास उन तथ्यों के आधार पर किया गया हो, जो मौजूद नहीं है तथा स्पष्ट रूप् से गलत है। इस तरह शक्ति का प्रयोग दूषित हो जाता है। न्यायालय न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करने में न्यायसंगत हो सकता है यदि - आक्षेपित आदेश दुर्भावनापूर्ण, बेईमानी से तथा भ्रष्ट प्रथाओं से ग्रस्त हो। प्राधिकरण द्वारा आदेश विधायिका द्वारा प्राधिकरण को प्रदत सीमाआेंं से परे पारित किया गया था। इस प्रकार, न्यायालय को संतुष्ट होना पड़ता है कि प्राधिकरण द्वारा पारित आदेश पर हस्तक्षेप तब करें, जब अवैधता, तर्कहीनता और प्रक्रियात्मक अनुचितता के आधार हो। न्यायालय के पास प्रशासनिक निर्णयाेंं को सुधारने की विशेषज्ञता नहीं है। इसलिए, न्यायालय स्वयं दोषपूर्ण हो सकता है और प्राधिकरण के आदेश में हस्तक्षेप करने पर भारी प्रशासनिक बोझ या गैर-बजट व्यय हो सकता है। [पैरा 14] [1005-एफ-एच; 1006-ए-बी]

आय-कर आयुक्त, बॉम्बे और अन्य। वी. 1983 (3) एससीआर 773; टाटा सेल्युलर बनाम। भारत संघ ए. आई. आर. 1996 एससी 11: 1994 (2) पूरक। एससीआर 122; पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल स्वतंत्रता और ए. एन. आर. वी. भारत संघ और ओआरएस। एआईआर 2004 एससी 456: 2003 (6) पूरक। एससीआर 860;

एन. सी. टी. दिल्ली राज्य और एन. आर. वी. संजीव उर्फ बिट्टू एयर 2005 एससी 2080: 2005 (3) एससीआर 151-पर भरोसा किया।

1.2. अदालत को बहुत सावधानी के साथ काम करना चाहिए और हमेशा व्यापक जनहित को ध्यान में रखना चाहिए ना कि केवल एक कानूनी मुददा बनाने को न्यायालय को यह ध्यान रखना चाहिये कि न्यायिक समीक्षा योग्यता के आधार पर निर्णय लेने के समान नहीं है। इस प्रकार, न्यायालय साक्ष्य की पुनः मूल्यांकन करने की शक्ति से वंचित है और किसी विशेष आरोप के प्रमाण पर अपने स्वयं के निष्कर्ष पर आने के लिये भी, क्योंकि न्यायिक समीक्षा का दायरा सीमित है।निर्णय लेने की प्रक्रिया और ना ही स्वयं निर्णय के खिलाफ है और ऐसी स्थिति में न्यायालय अपने स्वयं के स्वतंत्र निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकता है। [पैरा 15 और 17] [1006 - डी, एफ-जी]

एयर इंडिया लिमिटेड बनाम कोचीन अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा लिमिटेड और अन्य।एआईआर 2000 एससी 801: 2000 (1) एस. सी. आर. 505; उच्च न्यायालय अपने पंजीयक के माध्यम से बॉम्बे में न्यायपालिका v. उदयसिंह एस/ओ गणपतराव नायक निंबालकर और अन्य। ए. आई. आर 1997 एस. सी. 2286: 1997 (3) एससीआर 803; आंध्र प्रदेश सरकार और अन्य। वी. मोहम्मद. नसरुल्ला खान एयर 2006 एससी 1214: 2006 (1) एससीआर 911 ; भारत संघ और ओआरएस। वी. मानब कुमार गुहा (2011) 11 एससीसी 535: 2011 (3) एस. सी. आर. 272-पर निर्भर।

1.3. जहाँ सार्वजनिक पदों के धारक यह भूल गए कि उन्हें सौंपे गए पद पवित्र हैं। न्यास है कार्यालय उपयोग करने के लिये तथा न कि दुरुपयोग करने के लिए होते हैं। जहाँ ऐसे न्यासी अनुचित लाभ प्राप्त करने के लिए बेईमान साधनों की ओर रुख

करते हैं, वहाँ न्यायिक समीक्षा का दायरा सर्वोपरि महत्व हाे जाता है। [पैरा 16] [1006-ई]

कृष्ण यादव और अन्र। वी. हरियाणा राज्य और अन्य। ए. आई. आर 1994 एस. सी. 2166: 1994 (4) एस. सी. सी. 165-पर निर्भर।

2. हस्तगत मामले में आरोप संख्या 4 पर, उच्च न्यायालय ने यह देखने में तथ्यात्मक गलती की है कि 'एम' अपीलार्थी द्वारा पूर्वव्यापी प्रभाव के साथ एक नियमित शिक्षक के रूप में नियुक्त किया गया था। वास्तव में इसका कोई प्रमाण नहीं है कि अपीलार्थी ने 'एम' को नियमित रूप से नियुक्त किया हो। क्योंकि 'एम' पहले से ही 10 साल की अवधि के लिए सेवा में था। आरोप संख्या 6 के संबंध में भी वैसा ही है। क्योंकि उच्च न्यायालय द्वारा मामले पर विचार करते हुए खुद को गलत निर्देश दिये। मानो जैसे अपीलार्थी के खिलाफ दो वाहन ले रहा था; जहां एक उसकी आधिकारिक कार आैर दूसरा एक अनुरक्षक, हालांकि उनके उपर ऐसा कोई आरोप अपीलार्थी ने नहीं लगाया है। उच्च न्यायालय ने आरोप संख्या 4 पर समीक्षा याचिका, की सुनवाई के दौरान इस तथ्य पर विचार नहीं किया कि प्रधान शिक्षक के रूप में 'एम' की नियुक्ति बोर्ड का सर्वसम्मत निर्णय था और अपीलार्थी के अकेले का नहीं था। उच्च न्यायालय ने भी अपने मूल निर्णय में दो वाहन के संबंध में गलती को भी सहीं नहीं किया है। [पैरा 12] [1004-जी-एच; 1005-ए-सी]

3.1 . यदि दी गई सजा असमान है दुराचार की गंभीरता से, तो इस प्रकार, यह मनमाना हो आैर संविधान के अनुच्छेद 14 के अधिदेश का उल्लंघन होगा। [पैरा 18] [1007-बी)

3.2 . न्यायिक समीक्षा की शक्तियों का प्रयोग करते हुए, न्यायालय "सामान्य रूप से" स्वयं के निष्कर्ष को प्रतिस्थापित नहीं कर सकता है। हालाँकि, यदि किसी

प्राधिकरण द्वारा लगाया गया जुर्माना" अदालत की अंतरात्मा को झकझोर देता है, तब उचित रूप् से राहत को मोड़ देगा। प्राधिकरण को लगाए गए दंड पर पुनर्विचार करने के आदेश देकर या तो दुर्लभ और असाधारण मामलों में, मुकदमेबाजी, को कम करने के लिये उचित दण्ड ठोस कारण देकर लगाया। आनुपातिकता के मुद्दे की जांच करते समय, अदालत इस पर भी विचार कर सकती है जिन परिस्थितियों में दुर्व्यवहार किया गया। किसी मामले में, प्रचलित परिस्थितियाँ हो सकती है, उस पर आरोपी को एक निश्चित तरीके से कार्य करने के लिए मजबूर किया हो। हालाँकि उनका ऐसा करने का इरादा नहीं था। अदालत प्रभाव के आगे जांच कर सकती है, अगर आदेश को दरकिनार कर दिया जाता है या दंड द्वारा प्रतिस्थापित। [पैरा 19] [1007-एच; 1008 - ए-सी]

रंजीत ठाकुर बनाम। भारत संघ और ओआरएस। ए. आई. आर. 1987 एस. सी. 2386; भारत संघ और ए. एन. आर. वी. जी. गनयुथम (मृत जे. पी. सारस्वत (2011) 4 एस. सी. सी. 545; चंद्र कुमार चोपड़ा बनाम। भारत संघ और ओआरएस। (2012) 6 एस. सी. सी. 369; महापंजीयक, पटना उच्च न्यायालय बनाम। पांडे गजेंद्र प्रसाद और अन्य। एयर 2012 एससी 2319; बी. सी. चतुर्वेदी बनाम भारत संघ और ओआरएस। ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 484; वी. रमण बनाम। A.P.S.R.T.C आैर अन्य। एयर 2005 एससी 3417; मेघालय राज्य और अन्य। वी. मक्केन सिंह एन. मारक एयर 2008 एससी 2862; डिपो प्रबंधक,भारत और ओआरएस। वी. बोडुपल्ली गोपालस्वामी (2011) 13 एस. सी. सी. 553; संजय कुमार सिंह बनाम। भारत संघ और ओआरएस। एयर 2012 एस. सी. 1783; भारत संघ और अन्य। वी. आर. के. शर्मा ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 3053-पर भरोसा किया।

3.3 . न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करते हुए, अदालत केवल सजा में हस्तक्षेप नहीं कर सकती है। केवल चरम मामलों में, जो उनके चेहरे पर विकृति या

तर्कहीनता दिखाएँ, उन्हीं में न्यायिक समीक्षा की जा सकती है आैर अनुकंपा के अदालतों को मामले में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिये। [पैरा 23] [1009-जी-एच]

3.4. अदालत द्वारा दर्ज किए गए तथ्यों के निष्कर्षों को विकृत माना जा सकता है यदि निष्कर्षों पर प्रासंगिक सामग्री को अनदेखा कर बहिष्कृत करके या लेकर अप्रासंगिक/अस्वीकार्य सामग्री पर विचार करके किया गया हो। न निष्कर्ष को विकृत भी कहा जा सकता है यदि वह इतना अपमानजनक है कि तर्क की अवहेलना करता हो तथा उसे निर्णय बिना किसी साक्ष्य के लिया जाता है या पूरी तरह से अविश्वसनीय सबूत और कोई बिना उचित सबूत के लिया जाता है। उस व्यक्ति पर कार्यवाही करने का अादेश विकृत होगा। लेकिन अगर रिकॉर्ड पर कुछ सबूत है जो स्वीकार्य है और जिस पर भरोसा किया जा सकता है, उन पर निष्कर्षों को विकृत नहीं माना जाएगा और निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा। इसलिए, जहां कदाचार, घोर अनियमितता या अवैधता का प्रमाण है, वहां हस्तक्षेप की अनुमति है। [पैरा 24] [1010-ए-डी]

राजिंदर कुमार किंद्र बनाम। दिल्ली प्रशासन आकाशवाणी 1984 एससी 1805; कुलदिप सिंह बनाम। पुलिस आयुक्त और अन्य। ए. आई. आर. 1999 एस. सी. 677; गामिनी बाला कोटेश्वर राव और अन्य। वी. आंध्र प्रदेश राज्य थ. सचिव आकाशवाणी 2010 एससी 589;बाबू वी। केरल राज्य (2010) 9 एस. सी. सी. 189-पर निर्भर था।

3.5. वर्तमान मामले में, जहाँ तक आरोप संख्या 4 से संबंधित, इस मामले पर बोर्ड द्वारा विचार किया गया था,जिसमें कई अधिकारी और अपीलार्थी शामिल नहीं हो सके। जिनको अनुशासनात्मक कार्रवाई के लिए चुनिंदा रूप से लक्षित किया गया। इसके अलावा, कोई भी सामग्री रिकॉर्ड पर नहीं रखी जा सकी कि बीएसएफ द्वारा कभी नियमितीकरण के लिए एक नीति तैयार की गई थी कि अस्थायी शिक्षक को नियमित शिक्षक में करें तथा इस तरह की स्थिति में अपीलार्थी एक स्कूल शिक्षक के रूप में

'एम' को नियमित नहीं कर सकता था, भले ही उनके पास 10 वर्ष का अनुभव। (यह कोई शुल्क भी नहीं था। अपीलार्थी के खिलाफ और न ही कोई निष्कर्ष निकला जांच अधिकारी के द्वारा ऐसा कोई निष्कर्ष निकाला गया था आैर ना ही मामला न्यायाधिकरण के समक्ष उठाया गया था)। [पैरा 25] [1010-ई-जी]

3.6 . आरोप संख्या 04 व 06 साबित आरोप है, दोनों मामले में कदाचार पारित होता है, जो कि प्रशासनिक प्रकृत्ति का है ना कि गंभीर प्रकृति का। यह विभाग का मामला नहीं था कि अपीलार्थी अनुरक्षक वाहन को अपने साथ ले गया था। वहां केवल एक ही वाहन था जो एक आधिकारिक वाहन था। अधिकारी के प्रयोग करने के लिये और आरोप संख्या 6 आंशिक रूप से साबित हुआ है। अनिवार्य सेवानिवृत्ति की अदालत की अंतरात्मा को झकझोर देती है और यह सजा अपराध के अनुरूप साबित नहीं होती है। एकमात्र सजा जिसकाे अपराध के अनुरूप माना जा सकता है। जैसा कि भारत सरकार द्वारा प्रस्तावित किया गया था संचयी प्रभाव के बिना एक वर्ष के लिए दो वेतन वृद्धि रोक दी जाये। वर्तमान मामले के तथ्य के अनुसार, न्यायालय निर्देश देता है कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सजा को प्रतिस्थापित करें तथा भारत संघ प्रस्तावित दंड अर्थात संचयी प्रभाव के बिना एक वर्ष के लिए दो वेतन वृद्धि को रोका जाये। [पैरा 26] [1011-बी-एफ]

मामला कानून संदर्भः

1983 (3) एससीआर 773	भरोसा	पैरा13
1994 (2) पूरक। एस. सी. आर. 122	निर्भर	पैरा 14

2003(6) पूरक। एस. सी. आर. 860 निर्भर पैरा 14

2005 (3) एससीआर 151 भरोसा पैरा 14

2000 (1) एससीआर 505 भरोसा पैरा 15

1994 (4) एससीसी 165 भरोसा पैरा 16

1997 (3) एससीआर 803 भरोसा पैरा17

2006 (1) एससीआर 911 भरोसा पैरा 17

2011 (3) एससीआर 272 भरोसा पैरा 17

ए. आई. आर 1987 एससी 2386 भरोसा पैरा 18

ए. आई. आर 1997 एस. सी 3387 भरोसा पैरा 18

(2011) 4 एस. सी. सी. 545 भरोसा पैरा 18

(2012) 6 एस. सी. सी. 369 भरोसा पैरा 18

आकाशवाणी 2012 एससी 2319 भरोसा पैरा18

ए. आई. आर 1996 एस. सी. 484 भरोसा पैरा 19

ए. आई. आर 2005 एस. सी. 3417 भरोसा करें पैरा 20

एआईआर 2008 एससी 2862 भरोसा करें पैरा 21

(2009) 2 एस. सी. सी. 681 भरोसा पैरा 22

(2011) 13 एस. सी. सी. 553 भरोसा पैरा 22

आकाशवाणी 2012 एस. सी. 1783 भरोसा पैरा 22

ए. आई. आर 2001 एस. सी. 3053 भरोसा पैरा 23

ए. आई. आर 1984 एस. सी. 1805 भरोसा पैरा 24

ए. आई. आर 1999 एस. सी 677 भरोसा पैरा 24

आकाशवाणी 2010 एससी 589 भरोसा पैरा 24

(2010) 9 एस. सी. सी 189 भरोसा पैरा 24

सिविल अपीलीय न्यायनिर्णयः सिविल अपील सं 4715-4716 2013 से।

नई दिल्ली में दिल्ली उच्च न्यायालय के 2012 की समीक्षा याचिका संख्या 102 के निर्णय और आदेश मे पारित दिनांकित 15.02.2012 से ।

के साथ

कोंम्ट। पेट। (ग) संख्या। 180-181 2013 से

पी. एस. पटवालिया, गौरव पचनंदा, रवि प्रकाश, उदिता सिंह, अवनि सिंह (चंद्र प्रकाश के लिए अपीलार्थी के लिए। आर. पी. भट, ए. टी. एम. रंगरामुजम, रेखा पांडे, बी. उत्तरदाताओं के लिए कृष्ण प्रसाद, जी. एन. रेड्डी, बी. देबोजीत।

न्यायालय का निर्णय डॉ बी०एस० चौहान, जे. के द्वारा पारित किया गया था

1. 2012 की एसएलपी (सी) संख्या 22263-22264 में दी गई छुट्टी।

2. ये अपीलें 2012 की समीक्षा याचिका संख्या 102 में पारित दिल्ली उच्च न्यायालय के दिनांक 15.02.2012 के निर्णय और आदेश के विरूद्घ दायर की गई हैं; और 2011 की रिट याचिका संख्या 4207 में दिनांक 01.02.2012 का आदेश। इस आदेश के माध्यम से उच्च न्यायालय ने केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण के आदेश के खिलाफ भारत संघ - प्रतिवादी संख्या 01 द्वारा दायर रिट याचिका को अनुमति दी है; (इसके बाद) जिसे 'ट्रिब्यूनल; कहा जाता है), बहुत बड़ी संख्या में शिकायतें उठाता हैं। अपीलकर्ता दर-दर भटक रहा था, क्योंकि उसे बिना किसी गलती के परेशान किया गया था और दंडित किया गया था और उसे ऐसी सजा दी गई थी जो अनावश्यक थी। इस प्रकार, उन्होंने कई बार ट्रिब्यूनल, दिल्ली उच्च न्यायालय और इस न्यायालय का रूख किया।

3. इन अपीलों और अवमानना याचिकाआेंं को जन्म देने वाले तथ्य और परिस्थितियां इस प्रकार हैंः-.

ए.) अपीलकर्ता 1982 बैच का एक आईपीएस अधिकारी, 01.09.1982 को सेवा में शामिल हुआ, उसे उप महानिरीक्षक (डी०आई०जी०) के पद पर पदोन्नत किया गया, और उसके बाद आंध्र प्रदेश राज्य के अपने कैडर में पुलिस महानिरीक्षक (डी०आई०जी०) के रूप में नियुक्त किया गया। मई 2001 में। अपीलकर्ता प्रतिनियुक्ति पर था और 23.06.2005 से 14.11.2006 तक आईजी, फ्रंटियर हेड क्वार्टर, सीमा सुरक्षा बल (बी०एस०एफ०) (उत्तरी बंगाल) के रूप में तैनात था।

बी.) अपीलकर्ता को दिनांक 13.11.2006 के आदेश के तहत निलंबित कर दिया गया था क्योंकि अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने अनुशासनात्मक कार्यवाही आयोजित करने का निर्णय लिया था। इसके परिणामस्वरूप, 23.03.2007 को एक आरोप पत्र दिया गया, जिसमें 08 आरोप थे। अपीलकर्ता ने उक्त सभी आरोपों से इनकार किया

और इसलिए, एक जांच अधिकारी नियुक्त किया गया। विभाग ने बड़ी संख्या में गवाहों से पूछताछ की और अपने मामले के समर्थन में दस्तावेज़ पेश किये। अपीलकर्ता ने भी अपना बचाव किया और जांच अधिकारी ने उसे दोषी मानते हुए दिनांक 23.12.2008 को रिपोर्ट प्रस्तुत की, क्योंकि आरोप संख्या 03 पूरी तरह से साबित हुआ जबकि आरोप संख्या 04 और 06 आंशिक रूप से साबित हुआ।

सी.)अनुशासनात्मक प्राधिकारी एक आरोप पर जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों में से एक से सहमत नहीं थे और माना कि आरोप संख्या 04 पूरी तरह से साबित हुआ था। अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा अपीलकर्ता को जारी किए गए कारण बताओ नोटिस के जवाब में, उन्होंने 10.11.2009 को अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा असहमति नोट के खिलाफ एक विस्तृत प्रतिनिधित्व प्रस्तुत किया।

डी.) मांगे जाने पर संघ लोक सेवा आयोग (आगे इसे 'यूपीएससी' कहा जाएगा) ने 20.08.2010 को सजा के संबंध में अपनी सलाह दी। केंद्रीय सतर्कता आयोग (बाद में 'सीवीसी' के रूप में संदर्भित) ने भी 18.02.2009 को अपीलकर्ता के खिलाफ आरोपों के संबंध में अपनी सलाह दी। सभी सामग्री पर विचार करने के बाद, अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने 08.09.2010 को सेवा से बर्खास्तगी की सजा का आदेश पारित किया।

ई.) व्यथित, अपीलकर्ता ने ट्रिब्यूनल के समक्ष 2010 का OA नंबर 3234 दाखिल करके बर्खास्तगी के उक्त आदेश को चुनौती दी। प्रतिवादी नंबर 01 द्वारा इसका विरोध और विरोध किया गया। ट्रिब्यूनल ने दिनांक 08.09.2010 के फैसले और दिनांक 11.02.2011 के आदेश द्वारा सजा के आदेश को रद्द कर दिया और अपीलकर्ता को सभी परिणामी लाभों के साथ सेवा में बहाल करने का निर्देश दिया। **एफ.**) व्यथित, प्रतिवादी संख्या 01, भारत संघ ने दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष 2011 की रिट याचिका (सी) संख्या 4207 दायर करके ट्रिब्यूनल के उक्त आदेश को चुनौती दी। उच्च

न्यायालय ने अपने निर्णय और आदेश दिनांक 01.02.2012 के माध्यम से ट्रिब्यूनल द्वारा पारित निर्णय और आदेश दिनांक 11.02.2011 को रद्द कर दिया और प्रतिवादी संख्या 01 को आरोप संख्या 04 और 06 के संबंध में एक नया आदेश पारित करने का निर्देश दिया। उच्च न्यायालय की राय में केवल उक्त दो आरोप सिद्ध हुए।

जी.) अपीलकर्ता ने दिनांक 01.02.2012 के आदेश के विरूद्घ 2012 की समीक्षा याचिका संख्या 102 दायर की, हालांकि, इसे दिनांक 15.02.2012 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था।

एच.) व्यथित, प्रतिवादी नंबर 01 ने दिल्ली उच्च न्यायालय के दिनांक 01.02.2012 के उक्त आदेश को चुनौती देते हुए 2012 की एसएलपी (सी) संख्या 14639 दायर की। हालाँकि, इसे इस न्यायालय ने 09.05.2012 को खारिज कर दिया था।

आई.)अपीलकर्ता ने ये अपील दायर करके उच्च न्यायालय के दिनांक 01.02.2012 के उसी आदेश को चुनौती दी। इस बीच, प्रतिवादी नंबर 01 ने 23.05.2012 को अपीलकर्ता को फिर से बहाल कर दिया और उच्च न्यायालय के आदेश दिनांक 01.02.2012 के मद्देनजर उक्त दोनों आरोपों पर उचित जुर्माना लगाने का अस्थायी निर्णय लिया, रोक का जुर्माना संचयी प्रभाव के बिना एक वर्ष के लिए दो वेतन वृद्धि। प्रतिवादी नंबर 01 ने यूपीएससी से सलाह मांगी, जिसने दिनांक 13.08.2012 के पत्र के माध्यम से सलाह दी कि अपीलकर्ता को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त किया जाए। यूपीएससी द्वारा दी गई सलाह अपीलकर्ता को दी गई और उसे उस पर एक प्रतिनिधित्व देने के लिए कहा गया।

इस बीच, इस न्यायालय ने दिनांक 05.10.2012 के आदेश के तहत अपीलकर्ता को प्रतिवादी नंबर 01 के समक्ष एक विस्तृत प्रतिनिधित्व दाखिल करने के लिए कहा,

जिसे बदले में सजा के संबंध में एक निर्धारित अवधि के भीतर एक स्पष्ट और तर्कसंगत आदेश पारित करने के लिए कहा गया था। हालाँकि, सज़ा का आदेश तत्काल प्रभाव से लागू नहीं किया जाएगा और इसे सुनवाई की अगली तारीख पर इस न्यायालय के समक्ष रखा जाएगा। इसके अनुसरण में, अपीलकर्ता ने 05.10.2012 को अभ्यावेदन प्रस्तुत किया। प्रतिवादी क्रमांक 01 ने दिनांक 17.10.2012 के आदेश द्वारा अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सजा लगाने का आदेश पारित किया। उक्त आदेश दिनांक 19.11.2012 के पत्र के माध्यम से प्रभावी किया गया और अपीलकर्ता को सूचित किया गया।

जे.) इस प्रकार, इस न्यायालय के विचारार्थ प्रश्न यह हैं कि क्या अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा दी गई अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सजा साबित किए गए अपराध के अनुपात में है और क्या अवमानना याचिकाओं में उत्तरदाताओं ने जानबूझकर इसके द्वारा पारित आदेश दिनांक 05.10.2012 का उल्लंघन किया है। कोर्ट का मानना है कि सजा पर तब तक अमल नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि इसे अगली सुनवाई के समय अदालत में पेश न कर दिया जाए।

4. अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री पी०एस० पटवालिया ने प्रस्तुत किया है कि दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा साक्ष्यों को गलत तरीके से पढ़ा गया है कि आरोप संख्या 04 और 06 पूरी तरह से साबित हो गए हैं। आरोप तुच्छ प्रकृति के थे और अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सजा नहीं दी जा सकती थी। अपीलकर्ता को छह साल तक विभागीय कार्यवाही का सामना करना पड़ा और आगे की पदोन्नति के लिए विचार किए जाने से वंचित कर दिया गया। वह दिसंबर, 2013 में सेवानिवृत्त होने वाले हैं। अपीलकर्ता 11 महीने तक निलंबित रहा और लगभग 19 महीने तक सेवा से बर्खास्त कर दिया गया। शुरुआत में उन्हें 'जेड' श्रेणी की सुरक्षा दी

गई थी जिसे बाद में घटाकर 'वाई' श्रेणी कर दिया गया। अपीलकर्ता को निलंबन और बर्खास्तगी की अवधि के दौरान भी उक्त सुरक्षा/संरक्षण दिया गया था। उस दौरान भी उन्हें बुलेट प्रूफ कार और पीएसओ मुहैया कराए गए थे क्योंकि उन्हें नक्सलियों से खतरा था। इसलिए, दी गई सजा को रद्द किया जाना चाहिए।

इस अदालत द्वारा पारित आदेशों के मद्देनजर, जिसमें कहा गया है कि सजा का आदेश उत्तरदाताओं द्वारा पारित किया जा सकता है, लेकिन अदालत के सामने पेश किए बिना इसे प्रभावी नहीं किया जा सकता है, यह स्वेच्छा से उल्लंघन माना जाता है। इसलिए, अवमानना याचिकाओं में उत्तरदाताओं को जानबूझकर इसकी अवज्ञा के लिए दंडित किया जाना चाहिए।

5. इसके विपरीत, भारत संघ के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री आरपी भट्ट ने अपीलों और अवमानना याचिकाओं का जोरदार विरोध किया है और कहा है कि अपीलकर्ता के खिलाफ उक्त आरोप पूरी तरह से साबित हुए हैं। एक आईपीएस अधिकारी होने के नाते] वह अपनी जिम्मेदारियों को जानते थे और कोई नरमी नहीं बरती जानी चाहिए। इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश का स्वेच्छा से उल्लंघन नहीं किया गया है। इसलिए, अपील के साथ-साथ अवमानना याचिकाएं भी खारिज की जाने योग्य हैं।

6. हमने पक्षों के विद्वान वकील द्वारा की गई प्रतिद्वंद्वी दलीलों पर विचार किया है और रिकॉर्ड का अवलोकन किया है।

7. बीएसएफए उत्तरी बंगाल में अपने कार्यकाल के दौरान कथित कदाचार के लिए अखिल भारतीय सेवा (अनुशासन और अपील) नियम, 1969 के नियम 08 के तहत अपीलकर्ता को निम्नलिखित 08 आरोपों वाली दिनांक 23.03.2007 की चार्जशीट दी गई थीः गिनतीः-

(i) श्रीमती नाम की एक महिला के साथ रहने में लिप्त। चंद्रकला, उनकी कानूनी रूप से विवाहित पत्नी नहीं हैं।

(ii) श्रीमती द्वारा अनधिकृत हस्तक्षेप की अनुमति दी गई। चंद्रकला ने उत्तर बंगाल फ्रंटियर के आधिकारिक कामकाज में बाधा डाली, जिसके कारण क्वार्टर गार्ड से चार कांस्टेबलों को समय से पहले रिहा कर दिया गया।

(iii) नियमों की पूर्ण अवहेलना और अधिकार क्षेत्र के बिना, फ्रंटियर मुख्यालय, बीएसएफ दक्षिण बंगाल द्वारा नंबर 86161306 कांस्टेबल प्रकाश सिंह को दी गई सजा की समीक्षा की गई और दी गई सजा को कम कर दिया गया।

(iv) हेडमास्टर, बीएसएफ प्राइमरी स्कूल कदमतला के चयन में पक्षपात और हेरफेर किया गया, भले ही उम्मीदवार के पास आवश्यक योग्यता नहीं थी और वह पात्र नहीं था।

?(v) फर्जी तरीके से अपने मूल जिले, यूपी से एक व्यक्ति का बीएसएफ में नामांकन में सहायता की।

(vi) फरवरी 2006 में अपने पैतृक स्थान बलिया, यूपी में अपने बेटे की शादी के दौरान आधिकारिक वाहन, हथियार और गोला-बारूद और बीएसएफ कर्मियों का दुरुपयोग।

(vii) व्यक्तिगत कार्य के लिए चार बीएसएफ कांस्टेबलों को बनाए रखना।

(viii) पीएसओ, उत्तर बंगाल फ्रंटियर की विपरीत टिप्पणियों के बावजूद, श्री प्रकाश सिंह, कांस्टेबल को उत्तर बंगाल फ्रंटियर के साथ संलग्न किया गया।

8. जांच अधिकारी ने माना कि अपीलकर्ता के खिलाफ लगाए गए 08 आरोपों में से आरोप संख्या 01, 02, 05, 07 और 08 बिल्कुल भी साबित नहीं हुए। आरोप संख्या 03 पूरी तरह से सिद्ध हुआ और आरोप संख्या 04 और 06 आंशिक रूप से सिद्ध हुआ।

जांच अधिकारी ने उक्त आरोपों को निम्नानुसार निपटायाः I. आरोप संख्या 03 केवल कमांडिंग ऑफिसर के अधिकार क्षेत्र से बाहर के मामले में आदेश पारित करने की सीमा तक साबित हुआ। द्वितीय. आरोप 04 आंशिक रूप से कमांडिंग ऑफिसर द्वारा बिना किसी पक्षपात और हेराफेरी के बीएसएफ प्राइमरी स्कूल कदमतला में हेड मास्टर और शिक्षक के गलत चयन की हद तक साबित हुआ। तृतीय. आरोप संख्या 06 सक्षम प्राधिकारी की पूर्व अनुमति के बिना बलिया तक अधिकार क्षेत्र के बाहर निजी यात्रा के लिए बीएसएफ वाहन का उपयोग करने की सीमा तक आंशिक रूप से सिद्ध हुआ।

9. अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने दो आरोपों को अलग ढंग से निपटायाः आरोप संख्या 03 हालांकि अपीलकर्ता एक निर्धारित अधिकारी के रूप में श्री प्रकाश को दी गई सजा की समीक्षा करने में सक्षम नहीं है और इस प्रकार, इसने स्पष्ट रूप से अपीलकर्ता के कदाचार को स्थापित किया और आरोप उसके खिलाफ साबित हुआ।

आरोप संख्या 04 श्री एसएस मजूमदार पात्रता मानदंडों को पूरा नहीं करते थे और हेड मास्टर के पद के लिए चयन बोर्ड द्वारा उनकी सिफारिश नहीं की गई थी और इस प्रकार, अपीलकर्ता ने उनका पक्ष लिया और उन्हें हेड मास्टर के रूप में नियुक्त किया। इस प्रकार यह आरोप सिद्ध हुआ।

10. ट्रिब्यूनल द्वारा सभी सिद्ध आरोपों की दोबारा जांच की गई। सबूतों की फिर से सराहना करने के बाद, ट्रिब्यूनल ने आरोप संख्या 03 पर यह कहते हुए विचार किया कि समीक्षा याचिका पर विचार करना एक अर्ध-न्यायिक कार्य है। यह क्षेत्राधिकार के

बिना हो सकता है और पारित आदेश को आगे की कार्यवाही में ठीक किया जा सकता है लेकिन यह कदाचार की श्रेणी में नहीं आता है। ट्रिब्यूनल ने आरोप संख्या 04 के निष्कर्ष पर ध्यान दिया कि प्राथमिक विद्यालय के शिक्षक के साथ-साथ बीएसएफ स्कूल में हेड मास्टर की नियुक्ति का आदेश चयन प्रक्रिया में पक्षपात-हेरफेर के बिना किया गया था जैसा कि जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किया गया था और आया था। निष्कर्ष यह है कि चयन विभिन्न सदस्यों वाले बोर्ड द्वारा किया गया था, न कि अकेले अपीलकर्ता द्वारा और इस तथ्य पर भी ध्यान दिया गया कि श्री मजूमदार को अपीलकर्ता द्वारा प्राथमिक विद्यालय के शिक्षक के रूप में नियुक्त नहीं किया गया था, बल्कि वह स्कूल में काम कर रहे थे। 10 वर्ष। अन्य शिक्षक जो 07 वर्ष से अधिक समय से कार्यरत थे, उन पर भी विचार किया गया। विभाग ने कोई दस्तावेजी साक्ष्य जोड़ने के बजाय जांच में केवल गवाहों से पूछताछ की। अपीलकर्ता हेड मास्टर पद के लिए पात्रता मानदंड तय करने में सक्षम था। अपीलकर्ता की ओर से कोई पक्षपात या हेरफेर नहीं किया गया। ट्रिब्यूनल ने निम्नलिखित घटनाक्रमों पर भी ध्यान दियाः-

> "यह काफी अजीब है कि वही उत्तरदाता, जो हेडमास्टर के रूप में मजूमदार की अनियमित नियुक्ति पर जोर दे रहे थे, वही शिक्षा संहिता के खिलाफ थे, जब आवेदक ने उन्हें सेवाओं की समाप्ति के लिए कारण बताओ नोटिस जारी किया, तो उन्हें इसे वापस लेने का निर्देश दिया और उन सभी को सेवा में बने रहने की अनुमति दें। इतना ही, यह विशेष रूप से आदेश दिया गया था कि मजूमदार को सेवा में जारी रखा जाएगा। और फिर निम्नलिखित निष्कर्ष दर्ज कियाः

"हम आवेदक के विद्वान वकील की इस दलील को स्वीकार करते हैं कि उत्तरदाता एक ही सांस में गर्म और ठंडे हो रहे हैं। आवेदक को, अधिक से अधिक, हेडमास्टर के पद पर मजूमदार के चयन के लिए संयुक्त रूप से जिम्मेदार ठहराया जा सकता है, भले ही वह इस हद तक सबसे अच्छे थे कि उनकी नियुक्ति विज्ञापन में उल्लिखित शैक्षिक योग्यता मानदंडों के खिलाफ थी। लेकिन इसके लिए, जैसा कि ऊपर बताया गया है, अकेले उसे ज़िम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता।" (जोर दिया गया) ?आरोप संख्या 06 पर, ट्रिब्यूनल ने निम्नलिखित तथ्यों पर ध्यान दियाः

"आवेदक द्वारा प्रस्तुत स्पष्टीकरण को पूरी तरह से नजरअंदाज करते हुए उनके द्वारा आरोप आंशिक रूप से साबित किया गया है। इस प्रकार, तथ्यों और कानून दोनों में स्पष्ट त्रुटि है। उत्तरदाताओं ने आवेदक द्वारा प्रस्तुत बचाव को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया। हालाँकि, प्रथम दृष्टया, हमारा विचार है कि आवेदक द्वारा प्रस्तुत स्पष्टीकरण को स्वीकृति की आवश्यकता है, लेकिन एक बार, ऐसा करते समय हम साक्ष्य की सराहना करेंगे, हम ऐसा नहीं कर सकते हैं। (जोर दिया गया) और आगे इस प्रकार रखा गया हैः

"इसलिए, इस आरोप पर, मामला संबंधित अधिकारियों को सौंपने का रास्ता खुला हो सकता है, लेकिन इस मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों में, हम ऐसा करने से बचते हैं, भले ही आरोप जिस हद तक साबित हो गया हो।, इसे नजरअंदाज करने की आवश्यकता है क्योंकि, एक बार जब आवेदक वाहन और पीएसओ को बलिया ले

जाने का हकदार था, तो पूर्व अनुमति प्राप्त नहीं करना बिल्कुल भी गंभीर मुद्दा नहीं होगा। (महत्व जोड़ें)

11. उच्च न्यायालय ने आरोप संख्या 03 से निपटते समय ट्रिब्यूनल से सहमति व्यक्त की कि सजा के आदेश के खिलाफ समीक्षा याचिका पर विचार करना अधिकार क्षेत्र के बिना हो सकता है लेकिन जांच अधिकारी ने कोई निष्कर्ष नहीं निकाला कि यह जानबूझकर किया गया था। इसलिए, कोई न्यायिक त्रुटि हो सकती है जिसे अपील या किसी अन्य कार्यवाही में रद्द किया जा सकता है या ठीक किया जा सकता है लेकिन यह कदाचार की श्रेणी में नहीं आएगा। यह जांच का विषय नहीं हो सकता क्योंकि यह दुर्भावना या भ्रष्टाचार के किसी तत्व या अपीलकर्ता की ओर से दोषी लापरवाही के कारण कदाचार नहीं था। ऐसे में इसे कदाचार मानना स्वीकार्य नहीं होगा.

जहां तक स्कूल के हेड मास्टर के रूप में श्री मजूमदार की नियुक्ति का सवाल है, उच्च न्यायालय ने माना कि अपीलकर्ता श्री मजूमदार को दिखाए गए पक्षपात का दोषी था। अभियोग संख्या 06 पटना से बलिया तक वाहन का उपयोग करने के आरोप से संबंधित. उच्च न्यायालय ने इस बात पर भी गौर किया कि अपीलकर्ता को नक्सलियों की धमकियों के कारण 'वाई' श्रेणी की सुरक्षा दी गई थी। हालाँकि, वह बिना अनुमति के पटना से बलिया तक की यात्रा के लिए एस्कॉर्ट वाहन के हकदार नहीं थे और उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, उच्च न्यायालय ने ट्रिब्यूनल द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों को संशोधित किया।

12. हमने स्वीकार्य सीमा के भीतर मामले पर पुनर्विचार किया है। मामला आरोप संख्या तक ही सीमित रहा। केवल 04 और 06 क्योंकि अन्य सभी आरोप किसी न किसी स्तर पर महत्व खो चुके हैं, और हमें केवल उक्त आरोपों पर ध्यान देना होगा।

जांच अधिकारी, अनुशासनात्मक प्राधिकारी, न्यायाधिकरण और उच्च न्यायालय ने इसमें शामिल सभी तथ्यों पर विचार किया है। आरोप संख्या 04 पर, उच्च न्यायालय ने यह मानते हुए तथ्यात्मक गलती की है कि श्री एसएस मजूमदार को अपीलकर्ता द्वारा पूर्वव्यापी प्रभाव से नियमित शिक्षक के रूप में नियुक्त किया गया था। वास्तव में इस बात का कोई सबूत नहीं है कि अपीलकर्ता ने उन्हें नियुक्त किया था या उन्हें नियमित किया था क्योंकि श्री मजूमदार पहले से ही 10 साल की अवधि के लिए सेवा में थे। आरोप संख्या 06 के संबंध में भी यही स्थिति रही क्योंकि उच्च न्यायालय ने खुद को गलत दिशा में निर्देशित किया क्योंकि उसने इस मामले पर विचार किया जैसे कि अपीलकर्ता के खिलाफ आरोप दो वाहनों को ले जाने का था; एक उनकी आधिकारिक कार और दूसरा एस्कॉर्ट, हालांकि अपीलकर्ता के खिलाफ ऐसा कोई आरोप नहीं लगाया गया था।

उच्च न्यायालय ने आरोप संख्या 04 पर समीक्षा याचिका पर विचार करते समय इस तथ्य पर विचार नहीं किया कि हेड मास्टर के रूप में श्री एसएस मजूमदार की नियुक्ति बोर्ड का सर्वसम्मत निर्णय था, न कि अकेले अपीलकर्ता का। हाईकोर्ट ने भी दो वाहनों के इस्तेमाल को लेकर अपने मूल फैसले में हुई गलती को नहीं सुधारा.

13. आयकर आयुक्त, बॉम्बे एवं अन्य में। बनाम महिंद्रा एंड महिंद्रा लिमिटेड और अन्य, एआईआर 1984 एससी 1182, इस न्यायालय ने माना कि प्रशासनिक या कार्यकारी कार्यवाही की न्यायिक समीक्षा की अदालत की शक्ति के विभिन्न पैरामीटर, जिन पर अदालत हस्तक्षेप कर सकती है, अच्छी तरह से तय किए गए थे और यह अनावश्यक होगा निर्णयों की संपूर्ण श्रृंखला को पुनः दोहराएँ। न्यायालय ने आगे कहाः

> "यह एक स्थापित स्थिति है कि यदि कार्रवाई या निर्णय विकृत है या ऐसा है कि उचित रूप से सूचित व्यक्तियों का कोई भी उचित समूह,

गलत दृष्टिकोण अपनाकर खुद को गलत दिशा में निर्देशित करने वाले प्राधिकारी के पास नहीं आ सकता है, या आया है अप्रासंगिक या अप्रासंगिक मामलों से प्रभावित होकर अदालत का उसमें हस्तक्षेप करना उचित होगा।"

14. न्यायालय न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग कर सकता है यदि शक्ति के प्रयोग में कोई स्पष्ट त्रुटि हो या शक्ति का प्रयोग स्पष्ट रूप से मनमाना हो या यदि शक्ति का प्रयोग उन तथ्यों के आधार पर किया जाता है जो मौजूद नहीं हैं और जो स्पष्ट रूप से गलत हैं. शक्ति का ऐसा प्रयोग दूषित माना जाएगा। यदि विवादित आदेश दुर्भावनापूर्ण, बेईमान या भ्रष्ट आचरण से ग्रस्त है, तो अदालत को न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करना उचित हो सकता है, क्योंकि आदेश विधायिका द्वारा प्राधिकारी को प्रदत्त सीमाओं से परे पारित किया गया था। इस प्रकार, अदालत को हस्तक्षेप करने से पहले संतुष्ट होना होगा कि आदेश केवल अवैधता, तर्कहीनता और प्रक्रियात्मक अनुचितता के आधार पर प्राधिकरण द्वारा पारित किया गया था। न्यायालय के पास प्रशासनिक निर्णय को सही करने की विशेषज्ञता नहीं है। इसलिए, न्यायालय स्वयं दोषपूर्ण हो सकता है और प्राधिकरण के आदेश में हस्तक्षेप करने से राज्य पर भारी प्रशासनिक बोझ पड़ सकता है या बजट रहित व्यय हो सकता है। (वीडियो) टाटा सेल्यूलर बनाम यूनियन ऑफ इंडिया, एआईआर 1996 एससी 11 पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज एंड अन्य बनाम यूनियन ऑफ इंडिया एंड अन्य, एआईआर 2004 एससी 456; और स्टेट ऑफ एनसीटी ऑफ दिल्ली एंड अन्य बनाम संजीव उर्फ बिट्टू, एआईआर 2005 एससी 2080)।

15. एयर इंडिया लिमिटेड बनाम कोचीन इंटरनेशनल एयरपोर्ट लिमिटेड और अन्य, एआईआर 2000 एससी 801 में, इस न्यायालय ने न्यायिक समीक्षा के दायरे को

समझाते हुए कहा कि अदालत को बहुत सावधानी से काम करना चाहिए और ऐसी शक्ति का प्रयोग केवल जनता को आगे बढ़ाने के लिए करना चाहिए। ब्याज और केवल कानूनी मुद्दा उठाने पर नहीं। यह तय करने के लिए कि उसके हस्तक्षेप की आवश्यकता है या नहीं, अदालत को हमेशा व्यापक जनहित को ध्यान में रखना चाहिए।

16. ऐसा कोई मामला हो सकता है जहां सार्वजनिक कार्यालयों के धारक यह भूल गए हों कि उन्हें सौंपे गए कार्यालय एक पवित्र ट्रस्ट हैं और ऐसे कार्यालय उपयोग के लिए हैं न कि दुरुपयोग के लिए। जहां ऐसे ट्रस्टी अनुचित लाभ प्राप्त करने के लिए बेईमानी का सहारा लेते हैं, वहां न्यायिक समीक्षा का दायरा सर्वोपरि महत्व प्राप्त कर लेता है। (वीडियोः कृष्ण यादव एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य एवं अन्य, एआईआर 1994 एससी 2166)।

17. न्यायालय को यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिए कि न्यायिक समीक्षा अपीलीय प्राधिकारी के रूप में साक्ष्य की पुनः सराहना करके योग्यता के आधार पर निर्णय देने के समान नहीं है। इस प्रकार, अदालत सबूतों की फिर से सराहना करने और किसी विशेष आरोप के सबूत पर अपने निष्कर्ष पर पहुंचने की शक्ति से रहित है, क्योंकि न्यायिक समीक्षा का दायरा निर्णय लेने की प्रक्रिया तक ही सीमित है, न कि निर्णय के खिलाफ। और ऐसी स्थिति में न्यायालय अपने स्वतंत्र निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकता। (देखें बॉम्बे उच्च न्यायालय अपने रजिस्ट्रार के माध्यम से बनाम उदयसिंह पुत्र गणपतराव नाइक निंबालकर और अन्य, एआईआर 1997 एससी 2286 आंध्र प्रदेश सरकार और अन्य बनाम मोहम्मद नसरुल्ला खान, एआईआर 2006 एससी 1214 और भारत संघ एवं अन्य बनाम मानब कुमार गुहा, (2011) 11 एससीसी 535).

18. सजा की मात्रा पर हस्तक्षेप के सवाल पर इस न्यायालय द्वारा निर्णयों की श्रृंखला में विचार किया गया है, और यह माना गया है कि यदि दी गई सजा कदाचार

की गंभीरता के अनुपात में नहीं है, तो यह मनमाना होगा, और इस प्रकार, संविधान के अनुच्छेद 14 के आदेश का उल्लंघन होगा।

रंजीत ठाकुर बनाम भारत संघ एवं अन्य, एआईआर 1987 एससी 2386 में, इस न्यायालय ने निम्नानुसार कहाः

> "लेकिन सज़ा अपराध और अपराधी के अनुरूप होनी चाहिए। यह प्रतिशोधात्मक या अनावश्यक रूप से कठोर नहीं होना चाहिए। यह अपराध के प्रति इतना असंगत नहीं होना चाहिए कि अंतरात्मा को झकझोर दे और अपने आप में पक्षपात का निर्णायक सबूत बन जाए। न्यायिक समीक्षा की अवधारणा के हिस्से के रूप में आनुपातिकता का सिद्धांत यह सुनिश्चित करेगा कि उस पहलू पर भी, जो अन्यथा, कोर्ट मार्शल के विशेष प्रांत के भीतर है, यदि सजा के संबंध में भी न्यायालय का निर्णय अपमानजनक अवज्ञा है तर्क, तो वाक्य सुधार से अछूता नहीं रहेगा। वर्तमान मामले में, सज़ा इतनी कठोर है कि इसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता है और इसे उचित ठहराया जा सकता है। न्यायिक समीक्षा में इसे बिना सुधारे नहीं रहने दिया जा सकता।" (जोर जोड़ा गया) (यह भी देखेंः भारत संघ और अन्य बनाम जी. गनयुथम (एलआरएस द्वारा मृत), एआईआर 1997 एससी 3387; उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम जेपी सारस्वत, (2011) 4 एससीसी 545; चंद्र कुमार चोपड़ा बनाम भारत संघ और अन्य, (2012) 6 एससीसी 369; और रजिस्ट्रार जनरल पटना उच्च न्यायालय बनाम पांडे गजेंद्र प्रसाद और अन्य, एआईआर 2012 एससी 2319)।

19. बीसी चतुर्वेदी बनाम भारत संघ और अन्य, एआईआर 1996 एससी 484 में, इस न्यायालय ने अपने पहले के विभिन्न निर्णयों की जांच करने के बाद पाया कि न्यायिक समीक्षा की शक्तियों का प्रयोग करते हुए, अदालत "सामान्य रूप से" अपने निष्कर्ष या दंड को प्रतिस्थापित नहीं कर सकती है। . हालाँकि, यदि किसी प्राधिकारी द्वारा लगाया गया जुर्माना अदालत की "अंतरात्मा को झकझोरता है", तो यह उचित रूप से राहत को ढालेगा या तो प्राधिकारी को लगाए गए जुर्माने पर पुनर्विचार करने का निर्देश देगा और असाधारण और दुर्लभ मामलों में, मुकदमेबाजी को छोटा करने के लिए, खुद ही जुर्माना लगाएगा। उसके समर्थन में ठोस कारणों के साथ उचित दंड। आनुपातिकता के मुद्दे की जांच करते समय, अदालत उन परिस्थितियों पर भी विचार कर सकती है जिनके तहत कदाचार किया गया था। किसी दिए गए मामले में, मौजूदा परिस्थितियों ने अभियुक्त को एक निश्चित तरीके से कार्य करने के लिए मजबूर किया होगा, हालांकि उसका ऐसा करने का इरादा नहीं था। यदि आदेश को रद्द कर दिया जाता है या उसके स्थान पर कोई अन्य जुर्माना लगाया जाता है, तो अदालत प्रभाव की आगे जांच कर सकती है। हालाँकि, यह केवल बहुत ही दुर्लभ मामलों में होता है कि अदालत, मुकदमेबाजी को छोटा करने के लिए, सक्षम प्राधिकारी द्वारा दी गई सजा के स्थान पर सजा की मात्रा के बारे में अपना दृष्टिकोण रखने के बारे में सोच सकती है।

20. वी. रमना बनाम एपीएसआरटीसी और अन्य, एआईआर 2005 एससी 3417 में, इस न्यायालय ने न्यायिक समीक्षा के दायरे पर विचार किया कि सजा की मात्रा केवल तभी स्वीकार्य है जब यह पाया जाए कि यह आरोपों की गंभीरता के अनुरूप नहीं है। और यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि सजा की मात्रा के संबंध में न्यायिक समीक्षा का दायरा केवल तभी स्वीकार्य है जब यह पाया जाए कि यह "अदालत की अंतरात्मा को चौंकाने वाला है, इस अर्थ में कि यह तर्क या नैतिकता की अवहेलना है" मानक।" सामान्य तौर पर, यदि लगाया गया दंड आश्चर्यजनक रूप से

अनुपातहीन है, तो अनुशासनात्मक प्राधिकारी को लगाए गए दंड पर पुनर्विचार करने का निर्देश देना उचित होगा। हालाँकि, मुकदमेबाजी को छोटा करने के लिए, असाधारण और दुर्लभ मामलों में, न्यायालय स्वयं इसके समर्थन में ठोस कारण दर्ज करके उचित सजा दे सकता है।

21. मेघालय राज्य एवं अन्य में। बनाम मेकेन सिंह एन. मराक, एआईआर 2008 एससी 2862, इस न्यायालय ने पाया कि एक न्यायालय या न्यायाधिकरण को सजा की मात्रा से निपटने के दौरान उन कारणों को दर्ज करना होगा कि ऐसा क्यों महसूस किया जाता है कि सजा साबित आरोपों के अनुरूप नहीं है। सज़ा देने के मामले में हस्तक्षेप की गुंजाइश बहुत सीमित है और असाधारण मामलों तक ही सीमित है। अनुशासनात्मक प्राधिकारी या अपीलीय प्राधिकारी द्वारा दी गई सज़ा जब तक अदालत की अंतरात्मा को आघात न पहुँचाए, न्यायिक समीक्षा के अधीन नहीं की जा सकती। (यह भी देखेंः डिपो मैनेजर, एपीएसआरटीसी बनाम पीण्जयराम रेड्डी, (2009) 2 एससीसी 681)।

22. विभागीय कार्यवाही के मामले में अदालत की भूमिका बहुत सीमित है और अदालत रिकॉर्ड पर साक्ष्य की विस्तृत सराहना पर प्राधिकारी द्वारा निकाले गए निष्कर्षों को प्रतिस्थापित करके अपने स्वयं के विचारों या निष्कर्षों को प्रतिस्थापित नहीं कर सकती है। सज़ा देने के मामले में, अदालत के हस्तक्षेप की गुंजाइश बहुत सीमित है और असाधारण मामलों तक ही सीमित है। अनुशासनात्मक प्राधिकारी या अपीलीय प्राधिकारी द्वारा दी गई सजा, जब तक कि अदालत की अंतरात्मा को झटका न लगे, न्यायिक समीक्षा के अधीन नहीं की जा सकती। अदालत को कारण दर्ज करना होगा कि सज़ा अनुपातहीन क्यों है। कारण बताने में विफलता न्याय से इनकार करने के समान है। केवल यह कहना कि यह अनुपातहीन है, पर्याप्त नहीं होगा। (देखेंः भारत संघ और

अन्य बनाम बोडुपल्ली गोपालस्वामी, (2011) 13 एससीसी 553; और संजय कुमार सिंह बनाम भारत संघ और अन्य, एआईआर 2012 एससी 1783)।

23. भारत संघ एवं अन्य में। बनाम आरके शर्मा, एआईआर 2001 एससी 3053, इस न्यायालय ने रंजीत ठाकुर (सुप्रा) में की गई टिप्पणियों की व्याख्या करते हुए कहा कि यदि आरोप हास्यास्पद था, सजा कठोर थी या बेहद असंगत थी तो इसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता होगी। हालाँकि, रंजीत ठाकुर (सुप्रा) में उक्त टिप्पणियों का यह अर्थ नहीं लिया जाना चाहिए कि एक अदालत, न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करते हुए, केवल इसलिए सजा में हस्तक्षेप कर सकती है क्योंकि वह सजा को असंगत मानती है। यह माना गया कि केवल चरम मामलों में, जो स्पष्ट रूप से विकृति या तर्कहीनता दिखाते हैं, न्यायिक समीक्षा हो सकती है और अदालतों को केवल दयालु आधार पर हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

24. यदि प्रासंगिक सामग्री को अनदेखा या बाहर करके या अप्रासंगिक-स्वीकार्य सामग्री पर विचार करके निष्कर्ष निकाले गए हैं तो अदालत द्वारा दर्ज किए गए तथ्य के निष्कर्षों को विकृत माना जा सकता है। निष्कर्ष को विकृत भी कहा जा सकता है यदि यह "साक्ष्य के वजन के विरुद्ध" है, या यदि निष्कर्ष इतनी अपमानजनक रूप से तर्क की अवहेलना करता है कि तर्कहीनता के दोष से ग्रस्त है। यदि कोई निर्णय बिना किसी सबूत या पूरी तरह से अविश्वसनीय सबूत के आधार पर आता है और कोई भी उचित व्यक्ति उस पर कार्रवाई नहीं करेगा, तो आदेश विकृत हो जाएगा। लेकिन अगर रिकॉर्ड पर कुछ सबूत हैं जो स्वीकार्य हैं और जिन पर भरोसा किया जा सकता है, तो निष्कर्षों को विकृत नहीं माना जाएगा और निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा। (वीडियो) राजिंदर कुमार किंद्रा बनाम दिल्ली प्रशासन, एआईआर 1984 एससी 1805; कुलदीप सिंह बनाम पुलिस आयुक्त एवं अन्य, एआईआर 1999 एससी 677; गामिनी

बाला कोटेश्वर राव एवं अन्य बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, सचिव, एआईआर 2010 एससी 589; और बाबू बनाम केरल राज्य, (2010) 9 एससीसी 189)।

इसलिए, जहां कदाचार, घोर अनियमितता या अवैधता का सबूत है, वहां हस्तक्षेप की अनुमति है।

25. जहां तक आरोप संख्या 04 का सवाल है, इस मामले पर कई अधिकारियों वाले बोर्ड द्वारा विचार किया गया था और अपीलकर्ता को अनुशासनात्मक कार्रवाई के लिए चुनिंदा रूप से लक्षित नहीं किया जा सकता था। इसके अलावा, रिकॉर्ड पर कोई सामग्री नहीं रखी जा सकी कि बीएसएफ ने कभी भी एक अस्थायी शिक्षक को नियमित शिक्षक के रूप में नियमित करने के लिए कोई नीति बनाई थी और ऐसी तथ्य-स्थिति में, अपीलकर्ता एक स्कूल शिक्षक के रूप में श्री मजूमदार की सेवाओं को नियमित नहीं कर सकता था। भले ही उनके पास 10 साल का अनुभव हो. (यह अपीलकर्ता के खिलाफ कोई आरोप भी नहीं था और न ही जांच अधिकारी का कोई निष्कर्ष था, न ही ट्रिब्यूनल के समक्ष ऐसा कोई मामला उठाया गया है)।

रिकॉर्ड से यह स्पष्ट है कि भारत सरकार द्वारा मुख्य सचिव, आंध्र प्रदेश के माध्यम से अपीलकर्ता को भेजे गए पत्र दिनांक 04.04.2013 के अनुसार, प्रस्तावित सजा इस प्रकार हैः

> "अखिल भारतीय सेवा (अनुशासन और अपील) नियम, 1969 के नियम 06 के तहत सजा के रूप में अपीलकर्ता पर संचयी प्रभाव के बिना एक वर्ष के लिए दो वेतन वृद्धि रोकने का जुर्माना लगाया जाएगा।"

26. सिद्ध आरोप केवल आरोप संख्या 04 और 06 ही रहे और दोनों मामलों में कदाचार गंभीर प्रकृति के कदाचार के बजाय प्रशासनिक प्रकृति का प्रतीत होता है। विभाग का यह मामला नहीं था कि अपीलकर्ता एस्कॉर्ट वाहन अपने साथ ले गया था। केवल एक वाहन था जो उसके उपयोग के लिए एक आधिकारिक वाहन था और आरोप संख्या 06 आंशिक रूप से सिद्ध हुआ था। इसे ध्यान में रखते हुए, अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सजा अदालत की अंतरात्मा को झकझोर देती है और किसी भी तरह से इसे अपीलकर्ता द्वारा किए गए और उसके खिलाफ साबित किए गए अपराध के अनुपात में या अनुरूप नहीं माना जा सकता है। एकमात्र सज़ा जिसे अपराध के अनुरूप माना जा सकता था, वह भारत सरकार द्वारा प्रस्तावित थी कि संचयी प्रभाव के बिना एक वर्ष के लिए दो वेतन वृद्धि रोक दी जाए। उचित दंड देने के लिए मामले को अनुशासनात्मक प्राधिकारी के पास भेजना उचित होगा। हालाँकि, मामले के उतार-चढ़ाव भरे इतिहास को देखते हुए और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अपीलकर्ता 11 महीने तक निलंबित रहा, उसे 19 महीने तक बर्खास्तगी का आदेश झेलना पड़ा और दिसंबर 2013 में सेवानिवृत्ति की आयु तक पहुंचने के बाद सेवानिवृत्त हो जाएगा, तथ्य मामले में वारंट है कि इस अदालत को अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सजा को भारत संघ द्वारा प्रस्तावित सजा के स्थान पर प्रतिस्थापित करना चाहिए यानी संचयी प्रभाव के बिना एक वर्ष के लिए दो वेतन वृद्धि रोकना। इसे देखते हुए, हम अवमानना याचिकाओं पर आगे नहीं बढ़ना चाहते। अपीलों के साथ-साथ अवमानना याचिकाओं का तदनुसार निपटारा किया जाता है।

अपील एवं अवमानना याचिकाओं का निपटारा किया गया।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी योगेश चंद यादव (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।

योगेशचंद यादव,

(आर०जे०एस०)